इकाई- 3

3

लोकतंत्र में प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष

पिछले अध्यायों में इस तथ्य की विवेचना की गई कि लोकतंत्र में सत्ता विभाजन क्यों आवश्यक है ? हमने इसका भी विश्लेषण किया कि इस व्यवस्था में सरकार के भिन्न–भिन्न अंग तथा विभिन्न सामाजिक समूह सत्ता में भागीदारी कैसे करते हैं ? इस अध्याय में हम विवेचना करेंगे कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में सत्ता के शीर्ष बिन्दु पर बैठने वाला व्यक्ति ऐसा स्वतंत्र नहीं है कि वह मनमानी करता रहे । सत्ताधारी किसी भी स्थिति में अपने ऊपर पड़नेवाले प्रभावों एवं दवाबों से अलग नहीं हो सकते । लोकतांत्रिक व्यवस्था एक ऐसी आदर्श व्यवस्था है जिसके अंतर्गत समाज में रहनेवाले विभिन्न व्यक्ति के पारस्परिक हितों में टकराव चलता रहता है । इसलिए लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की विवशता है कि उसे परस्पर विरोधी विभिन्न भागों एवं दवाबों के बीच संतुलन एवं सामंजस्य बनाना पड़ता है । इस अध्याय में हम विश्लेषण करेंगे कि किस प्रकार समाज में रहनेवाले विभिन्न तरह के विचारकों की परस्पर–विरोधी माँगों और दवाबों के बीच लोकतंत्र की जड़ें काफी सुदृढ़ होती हैं । यदि हम यह कहें कि परस्पर–विरोधी माँगों एवं दवाबों के बीच लोकतंत्र फलता–फूलता है तो इससे कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी । इस अध्याय में हम तमाम व्यक्तियों और संगठनों द्वारा अख्तियार किए जा रहे तौर–तरीकों का अध्ययन करते हुए यह जानने का प्रयास करेंगे की लोकतांत्रिक व्यवस्था में उनकी सकारात्मक भूमिका का क्या प्रभाव पड़ता है ?

इस अध्याय में हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में राजनीतिक दल का क्या महत्त्व है ? इसके बाद राजनीतिक दल का सरल एवं संक्षिप्त परिभाषा जानते हुए लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिक दलों के प्रमुख कार्यों को भी जानने का प्रयास

करेंगे । साथ ही यह भी जानेंगे कि राजनीतिक दलों में प्रतिस्पर्धा से लोकतंत्र कैसे मजबूत होता है एवं राजनीतिक दलों के बीच प्रतिस्पर्धा राष्ट्रीय विकास में क्या योगदान करता है ? और अंत में भारत के प्रमुख राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय अर्थात् क्षेत्रीय दलों के बारे में जानेंगे ।

प्रतिस्पर्धा एवं जनसंघर्ष का अर्थ

पूरे विश्व में लोकतंत्र का विकास प्रतिस्पर्धा और जनसंघर्ष के चलते हुआ है । यदि हम यों कहें कि जनसंघर्ष के माध्यम से ही लोकतंत्र का विकास हुआ है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी । जब सत्ताधारियों और सत्ता में हिस्सेदारी चाहनेवालों के बीच संघर्ष होता है तब वह लोकतंत्र की निर्णयक घड़ी कहलाती है । ऐसी घड़ी किसी भी लोकतांत्रिक देश में तब आती है जब कोई देश लोकतंत्र के मार्ग पर आगे बढ़ रहा हो और उस देश में लोकतंत्र का विस्तार हो रहा हो । लोकतांत्रिक संघर्ष का समाधान जनता की व्यापक लामबंदी के सहारे संभव है । कभी-कभी भले ही ऐसे संघर्ष का समाधान मौजूदा संस्थाओं जैसे संसद या न्यायपालिका के माध्यम से हो गया हो, लोकतांत्रिक देशों में जन-संघर्ष और प्रतिस्पर्धा का आधार राजनीतिक संगठन होते हैं । जनसंघर्ष में जनता की भागीदारी भले ही स्वत: स्फूर्त हो, लेकिन सार्वजनिक भागीदारी संगठित राजनीति के द्वारा ही संभव है । राजनीतिक दल, दवाब-समूह और आंदोलनकारी समूह संगठित राजनीति के सकारात्मक माध्यम हैं ।

नेपाल और वोलिविया के जनसंघर्षों से स्पष्ट है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में किसी संघर्ष के पीछे अनेक संगठन होते हैं जो दो तरह से लोकतंत्र में अपनी भूमिका निभाते हैं । आमतौर से लोकतंत्र में किसी भी निर्णय को प्रभावित करने का एक जाना-पहचाना तरीका होता है राजनीति में प्रत्यक्ष भागीदारी के लिए राजनीतिक दलों का निर्माण होता है, चुनावों में भाग लिया जाता है और सरकार का निर्माण होता है । लेकिन समाज का प्रत्येक नागरिक इतने प्रत्यक्ष ढंग से लोकतंत्र में भागीदारी नहीं करता है । इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे प्रत्यक्ष राजनीतिक गतिविधियों में भाग नहीं लेने की इच्छा, उसके पास आवश्यक कौशल का अभाव या कोई अन्य

कारण । अतः ऐसे अनेक अप्रत्यक्ष तरीके हैं जिनका सहारा लेकर नागरिक सरकार से अपनी माँग कर सकते हैं । इसके लिए समाज और देश के लोग संगठन बनाकर अपने हितों या नजरिए को बढ़ावा देनेवाली गतिविधियाँ संचालित कर सकते हैं । ऐसा भी होता है कि कभी–कभी लोग बिना संगठन बनाए ही अपनी माँगों के लिए एकजुट होने का निर्णय करते हैं। ऐसे समूहों को जनसंघर्ष या आंदोलन कहा जाता है ।

लोकतंत्र में जनसंघर्ष की भूमिका

लोकतंत्र को मजबूत बनाने एवं उसे और सुदृढ़ करने में जनसंघर्षों की अहम् भूमिका होती है । जब 15 अगस्त 1947 को ब्रिटिश दासता से मुक्त होकर भारत ने 26 जनवरी 1950 को अपने गणतांत्रिक संविधान को अंगीकार किया तब से वह लोकतंत्र की आधारशिला दिनों–दिन सुदृढ़ कर रहा है । 19वीं शताब्दी के सातवें दशक के दौरान भारत में अनेक तरह के सामाजिक और जनप्रिय जनसंघर्षों की उत्पत्ति हुई जिसने लोकतंत्र के मार्ग को प्रशस्त किया । भारतीय लोकतांत्रिक इतिहास में 1970 का दशक कई दृष्टियों से इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि यह एक ऐसा दशक था जिसमें भारतीय लोकतंत्र के शीर्ष बिन्दु पर पदासीन श्रीमती इंदिरा गाँधी ने 1971 के आम चुनाव में अपने प्रभुत्त्व एवं सामर्थ्य का प्रदर्शन कर काँग्रेस को पुनर्स्थापित किया और श्रीमती गाँधी के नेतृत्व में भारत की सरकार बनीं । उसके बाद श्रीमती गाँधी ने संविधान के बुनियादी ढाँचे में परिवर्तन करने का प्रयास किया । 1975 में उन्होंने देश के अंदर आपातकाल की उद्घोषणा कर जिस ढंग से लोकतंत्र का विश्लेषण किया, उसके विरोध में सरकार विरोधी जनसंघर्ष तेज हुए और ये जनसंघर्ष लोकतंत्र को बड़े पैमाने पर प्रभावित किए । इस तरह के जनसंघर्ष लोकतंत्र विरोधी सरकार को हटाकर लोकतांत्रिक सरकार को स्थापित करने का प्रयास करते हैं, जैसा कि 1977 में केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार की स्थापना हुई । इस तरह हम समझ सकते हैं कि लोकतंत्र में जनसंघर्ष की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है ।

लोकतंत्र जनसंघर्ष के द्वारा विकसित होता है । लोकतंत्र में फैसले आम सहमति से लिए जाते

हैं । यदि सरकार फैसले लेने में जनसाधारण के विचारों को अनदेखी करती है तो ऐसे फैसलों के खिलाफ जनसंघर्ष होता है और सरकार पर दवाब बनाकर आम सहमति से फैसले लेने के लिए मजबूर किया जाता है । इससे विकास में आनेवाली बाधाएँ दूर हो जाती हैं ।

जनसंघर्ष सरकार को तानाशाह होने एवं मनमाना निर्णय से रोकते हैं क्योंकि लोकतंत्र में संघर्ष होना आम बात होती है । इन संघर्षों का समाधान जनता व्यापक लामबंदी के जरीए करती है । कभी–कभी इस तरह के संघर्षों का समाधान संसद या न्यायपालिका जैसे संस्थाओं द्वारा भी होता है, जिससे सरकार को हमेशा जनसंघर्ष का भय बना रहता है और सरकार तानाशाह होने एवं मनमाना निर्णय से बचती है ।

जनसंघर्ष से राजनीतिक संगठनों आदि का विकास होता है । ये राजनीतिक संगठन जन भागीदारी के द्वारा जन समस्याओं को सुलझाने में सहायक होते हैं । ये राजनीतिक संगठन राजनीतिक दल, दवाब समूह और आंदोलनकारी समूह के रूप में जाने जाते हैं ।

इस तरह हम समझ सकते हैं कि लोकतंत्र में जनसंघर्ष की अहम् भूमिका होती है । देश तथा अपने राज्य में एवं अन्य पड़ोसी देशों में अनेक ऐसे जनसंघर्ष हुए हैं जो लोकतंत्र को व्यापक रूप से प्रभावित किए हैं । आइये, इन जनसंघर्षों को संक्षिप्त रूप से समझें ।

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

बिहार का छात्र आंदोलन

1971 के आम चुनाव में सत्तारूढ़ काँग्रेस ने 'गरीबी हटाओ' का नारा देकर लोकसभा में बहुमत प्राप्त कर केन्द्र में सरकार का निर्माण किया था । लेकिन 1971–72 के बाद के वर्षों में देश की सामाजिक–आर्थिक दशा में कोई सुधार नहीं हुआ । बांग्लादेश से आये शरणार्थियों के चलते अर्थव्यवस्था और लड़खड़ा गयी । अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बांग्लादेश की स्थापना के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत को हर तरह की सहायता पर पाबंदी लगा दिया । अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल की कीमतों में अप्रत्याशित वृद्धि ने भारत की आर्थिक स्थिति को असंतुलित कर

दिया । 1972–73 में मॉनसून की असफलता के चलते पूरे देश में कृषि की पैदावार में काफी कमी आयी । परिणामस्वरूप, पूरे देश में असंतोष का माहौल था । मार्च 1974 में प्रदेश में बेरोजगारी और भ्रष्टाचार एवं खाद्यान्न की कमी और कीमतों में हुई अप्रत्याशित वृद्धि के चलते बिहार के छात्रों ने सरकार के विरूद्ध आंदोलन छेड़ दिया । बिहार के छात्रों ने अपने आंदोलन की अगुआई के लिए **जयप्रकाश नारायण** को आमंत्रित किया । जयप्रकाश नारायण ने छात्रों का निमंत्रण इस शर्त पर स्वीकार किया कि आंदोलन अहिंसक रहेगा जो बिहार तक अपने को सीमित नहीं रखेगा। इस दृष्टि से बिहार के छात्र–आन्दोलन ने एक राजनीतिक स्वरूप ग्रहण किया। **जयप्रकाश नारायण** के निवेदन पर जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित लोग आंदोलन में कूद पड़े । **जयप्रकाश नारायण** ने बिहार की काँग्रेस सरकार को बर्खास्त करने की माँग कर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वान किया । **जयप्रकाश नारायण** की 'संपूर्ण क्रांति' का उद्देश्य भारत में सच्चे लोकतंत्र की स्थापना करना था ।

बिहार सरकार के विरूद्ध सरकार की इस्तीफा के लिए घेराव, हड़ताल और संघर्ष का सिलसिला प्रारंभ हुआ । इसके बावजूद सरकार ने इस्तीफा नहीं दिया । **जयप्रकाश नारायण** की इच्छा थी कि बिहार का यह आंदोलन देश के अन्य भागों में भी फैले । उल्लेखनीय है कि जब बिहार में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में आंदोलन चल रहे थे तो उसी समय रेलवे कर्मचारियों ने भी केन्द्रीय सरकार के विरूद्ध एक राष्ट्रव्यापी हड़ताल का आह्वान किया । उस हड़ताल का व्यापक प्रभाव पड़ा । **जयप्रकाश नारायण** ने 1975 में दिल्ली में आयोजित संसद मार्च का नेतृत्व किया । राजधानी दिल्ली में अब तक इतनी बड़ी रैली का आयोजन कभी नहीं हुआ था । इस प्रकार, गुजरात और बिहार दोनों राज्यों के आन्दोलनों को काँग्रेस–विरोधी आंदोलन माना गया । **इंदिरा गाँधी** की मान्यता थी कि ये आंदोलन उनके प्रति व्यक्तिगत विरोध से प्रेरित थे ।

12 जून 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक निर्णय देकर इंदिरा गाँधी के निर्वाचन को अवैधानिक करार दिया । इस निर्णय के बाद यह स्पष्ट हो गया कि कानूनन इंदिरा गाँधी सांसद नहीं रहीं । इस प्रकार, एक बड़े राजनैतिक संघर्ष के लिए अब मैदान तैयार

हो चुका था । **जयप्रकाश नारायण** के नेतृत्व में विपक्षी दलों ने इंदिरा गाँधी के इस्तिफे के लिए दबाव डालना प्रारंभ किया । दिल्ली के रामलीला मैदान में एक विशाल प्रदर्शन कर **जयप्रकाश नारायण** ने इंदिरा गाँधी से इस्तीफा की माँग करते हुए राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह की घोषणा की । उन्होंने अपने आह्वान में सेना और पुलिस तथा सरकारी कर्मचारियों को भी सरकार का आदेश नहीं मानने के लिए निवेदन किया । इंदिरा गाँधी ने इस आंदोलन को अपने विरूद्ध एक षड्यंत्र मानते हुए 25 जून 1975 के आपातकाल की उद्घोषणा करते हुए **जयप्रकाश नारायण** सहित प्राय: सभी राजनीतिक दलों के नेताओं को जेल में डाल दिया ।

सरकार ने निवारक नजरबंदी का भी बड़े पैमाने पर दुरूपयोग करना शुरू किया । निवारक नजरबंदी अधिनियमों के अंतर्गत राजनीतिक कार्यकर्त्ता अपनी को गिरफ्तारियों की चुनौती न्यायालयों में नहीं दे सकते थे ।

1975 के आपातकाल के दौरान सरकार द्वारा इतनी ज्यादतियाँ की गई जिनका उदाहरण लोकतांत्रिक देशों में नहीं मिलता । आपातकाल ने भारतीय लोकतंत्र की कमजोरियों को उजागर कर दिया । सही अर्थ में आपातकाल के दौरान भारत लोकतांत्रिक नहीं रह गया था ।

जैसे ही आपातकाल की अवधि समाप्त हुई, लोकसभा के चुनावों की घोषणा कर दी गई। सही अर्थ में 1977 का लोकसभा चुनाव एक तरह से आपातकाल के अनुभवों के संबंध में जनमत–संग्रह था । 18 महीने के आपातकाल के बाद जनवरी 1977 में निर्वाचन की घोषणा होते ही सभी राजनीतिक नेताओं और कार्यकर्त्ताओं को जेलों से रिहा कर दिया गया । 1977 के चुनाव के ऐन मौके पर विपक्षी दलों ने **जनता पार्टी** नाम से जिस राजनीतिक दल का गठन किया था, उसे लोकसभा में अप्रत्याशित सफलता प्राप्त हुई । उल्लेखनीय है कि 1977 में लोकसभा के लिए हुए निर्वाचनों में जनता पार्टी और उसके साथी दलों को लोकसभा की कुल 542 सीटों में से 330 सीटें मिली थीं । इंदिरा गाँधी स्वयं रायबरेली और उनके पुत्र संजय गाँधी अमेठी से चुनाव में पराजित हो गये ।

अभी तक इस संबंध में लिखी गई उपरोक्त बातों से क्या आपको एहसास नहीं होता कि लोकतंत्र में जनसंघर्षों एवं आंदोलनों का एक ऐसा स्थान है, जिन्हें लोकतांत्रिक सरकारें अनेदेखाा

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

नहीं कर सकतीं । 1977 में भारतीय लोकतंत्र में जनता पार्टी की सरकार का गठन और इंदिरा गाँधी की पराजय ने अन्य देशों की तुलना में भारतीय लोकतंत्र की प्रक्रिया को काफी मजबूत कर दिया । 1977 के दशक के बाद भारतीय संविधान में उद्घोषित उद्देश्यों के क्रियान्वयन तथा अपने अधिकारों और दावों की पूर्ति हेतु प्रदेश में जनसंघर्ष छोटे–बड़े आंदोलनों के रूप में सरकार को सचेत करते रहे हैं ।

1977 में **जनता पार्टी** सरकार का गठन और उसकी समाप्ति का भी प्रभाव भारतीय लोकतंत्र पर पड़ा । 1980 में पुनः इंदिरा गाँधी का देश का प्रधानमंत्री बनना भारतीय लोकतंत्र की कार्यशैली का बढ़िया उदाहरण कहा जा सकता है ।

भारतीय लोकतंत्र में क्षेत्रीय आकांक्षाओं की राजनीतिक अभिव्यक्ति की अनुमति प्राप्त है । लोकतांत्रिक राजनीति में देश के विभिन्न राजनीतिक दल और समूह क्षेत्रीय पहचान, आकांक्षा या किसी विशेष क्षेत्रीय समस्याओं के द्वारा सरकार पर दबाव डालते हैं । जम्मू–कश्मीर के लोगों की आकांक्षाएँ, नागालैंड और मिजोरम जैसे पूर्वोत्तर राज्यों में भारत से अलग होने संबंधी आंदोलन तथा दक्षिण भारत में द्रविड़ आंदोलनों के अतिरिक्त भाषा के आधार पर भी राज्यों के गठन की माँग के लिए जन–आंदोलन हुए । उदाहरण के लिए तमिलनाडु में हिन्दी को **राजभाषा** बनाने के विरूद्ध आंदोलन चलाया गया । इसी प्रकार, पंजाबी भाषी लोगों ने अपने लिए जब एक अलग राज्य बनाने की माँग की तो उसे स्वीकार कर **पंजाब** और **हरियाणा** नाम से राज्य बनाये गए । बाद में छत्तीसगढ़, झारखण्ड एवं उत्तराखंड का गठन भी क्षेत्रीय माँगों के अनुरूप हुआ। अब हम भारत के विभिन्न प्रदेशों एवं क्षेत्रों में हुए उन आंदोलनों का वर्णन करेंगे जिसने जनसंघर्ष का रास्ता अख्तियार कर सरकार का ध्यान जन समस्याओं और उनके निराकरण के लिए किया। संक्षेप में ऐसे प्रमुख आंदोलन निम्नलिखित हैं–

चिपको आंदोलन

इस आंदोलन का प्रारंभ उत्तराखंड के दो–तीन गाँवों से हुआ । गाँववालों ने वन विभाग से निवेदन किया कि खेती–बाड़ी के औजार बनाने के लिए उन्हें अंगू के पेड़ काटने की अनुमति दी

जाए । वन विभाग ने गाँववालों को पेड़ काटने की अनुमति नहीं देकर खेल–सामग्री के निर्माताओं को जमीन का वह टुकड़ा व्यवसाय प्रयोग के लिए आवंटित कर दिया । वन विभाग की इस कारवाई से गाँववाले काफी दु:खी हुए और उन्होंने सरकार के इस निर्णय का जबर्दस्त विरोध किया । गाँववालों का यह विरोध शीघ्र ही उत्तराखंड के अन्य क्षेत्रों में भी फैल गया । परिणामस्वरूप, क्षेत्र की परिस्थितिकी और आर्थिक शोषण से जुड़े अन्य सवाल उठने लगे । गाँववालों ने सरकार से यह माँग की कि जंगल की कटाई का कोई भी ठेका बाहरी व्यक्तियों को नहीं दिया जाना चाहिए । उनकी स्पष्ट माँग थी कि स्थानीय निवासियों का जल, जंगल, जमीन जैसे प्राकृतिक संसाधनों पर एममात्र नियंत्रण होना चाहिए । इस आंदोलन ने स्थानीय भूमिहीन वन–कर्मचारियों का आर्थिक मुद्दा उठाकर उनके लिए न्यूनतम मजदूरी की गारंटी की माँग की ।

उल्लेखनीय है कि चिपको आंदोलन में महिलाओं ने सक्रिय भूमिका निभाई । महिलाओं की भूमिका इसलिए भी महत्त्वपूर्ण थी कि जंगल कटाई के ठेकेदार स्थानीय पुरुषों को शराब की आपूर्ति का भी व्यवसाय करते थे । गाँव के अधिकांश घरों के पुरुषों के शराबी हो जाने के दुष्परिणाम घर की आर्थिक स्थिति पर पड़ी । परिणामस्वरूप, महिलाओं ने शराबखोरी की लत के विरुद्ध आवाज उठाकर चिपको आंदोलन का दायरा और विस्तृत कर दिया । अन्य सामाजिक मसले भी इस आंदोलन से जुड़ गए । अंतत: इस आंदोलन को सफलता मिली और सरकार ने 15 वर्षों के लिए हिमालीय क्षेत्र में पेड़ों की कटाई पर रोक लगा दी । यह आंदोलन 1970 के दशक और उसके बाद के कुछ वर्षों में देश के विभिन्न क्षेत्रों में उत्पन्न विभिन्न जन आंदोलनों का प्रतीक बन गया ।

1970 और 1980 के दशक में देश के अंदर समाज के अनेक तबको को राजनीतिक दलों की कार्यशैली से मोह भंग हुआ । इसका तात्कालिक कारण 1977 में **जनता पार्टी** के रूप में गैर काँग्रेसवाद का प्रयोग भारतीय राजनीति में दूरदर्शी प्रभाव नहीं दिखा सका । परिणामस्वरूप, भारतीय समाज के विभिन्न समूहों के बीच उनके साथ हो रही अन्याय के चलते भारतीय

लोकतांत्रिक व्यवस्था से उनका असंतोष बढ़ता गया । इसके चलते देशांतर्गत सक्रिय कई राजनीतिक समूहों का विश्वास भारत की लोकतांत्रिक और चुनावी व्यवस्था से उठता गया । ऐसे विभिन्न समूह दलगत राजनीति से अलग होकर अपने आंदोजन को और व्यापक करने के लिए आवाम को लामबंद करने और इस प्रकार राजनीतिक दलों से स्वतंत्र आंदोलनों की शुरूआत हुई।

दलित पैंथर्स

दलित पैंथर्स महाराष्ट्र के दलितों के सामाजिक आर्थिक बदलावों से संबन्धित हैं । डॉ० अंबेदकर ने हिन्दू जाति व्यवस्था के ढाँचे से बाहर दलितों को समाज में एक गरिमापूर्ण स्थान दिलाने का अथक प्रयास किया । इस समुदाय ने भारतीय समाज में लंबे अरसे तक क्रुरतापूर्ण जातिगत अन्याय को सहन किया है । 1970 के दशक के प्रारंभ में भारतीय समाज के शिक्षित दलितों की प्रथम पीढ़ी ने विभिन्न मंचों से भारतीय संविधान में सन्निहित अपने अधिकारों एवं हकों की आवाज उठायी । शिक्षित दलितों की इस पीढ़ी में ज्यादातर शहर की झुग्गी–बस्तियों में पलकर बड़े हुए दलित थे । इसी क्रम में महाराष्ट्र में दलित हितों की दावेदारी के लिए 1972 में दलित युवाओं का एक संगठन बना जिसे 'दलित पैंथर्स' कहा गया । भारतीय संविधान में छुआछूत की प्रथा की समाप्ति के बावजूद भारतीय समाज से छुआछूत समाप्त नहीं हुआ । 1960 एवं 70 के दशक में सरकार द्वारा इस संबंध में बनाए गए विभिन्न अधिनियमों के बावजूद दलितों के साथ सामाजिक भेदभाव तथा हिंसा का वर्त्ताव जारी रहा । दलित महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार तो होते ही थे, जातिगत प्रतिष्ठा की छोटी–मोटी बातों को लेकर दलितों को काफी परेशान भी किया जाता था । दलितों पर हो रहे सामाजिक एवं आर्थिक उत्पीड़न को रोक पाने में सरकार द्वारा निर्मित कानून बेअसर हो रहे थे । दूसरी तरफ **रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया** जैसे राजनीतिक दलों को दलित समर्थन कर रहे थे, लेकिन ऐसे दल चुनावी राजनीति में सफल नहीं हो रहे थे । ये सब कारण थे जिनके चलते **दलित पैंथर्स** ने दलित अधिकारों की दावेदारी करते हुए जनकाररवाई का रास्ता अख्तियार किया ।

महाराष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों में दलितों पर बढ़ रहे अत्याचारों से लड़ना **दलित पैंथर्स** की मुख्य

जिम्मेवारी थी । इसने दलितों पर हो रहे अत्याचारों के मुद्दे पर लगातार विरोध आंदोलन चलाया। परिणामस्वरूप, 1989 में सरकार द्वारा एक व्यापक कानून के अंतर्गत दलितों पर अत्याचार करनेवालों पर कठोर दंड का प्रावधान किया गया । बाद में, **दलित पैंथर्स** के वृहद् विचाराधरात्मक कार्यक्रम अपनाए, जैसे– जाति–प्रथा उन्मूलन, भूमिहीन गरीब किसानों की समस्याओं का निराकरण तथा शहरों के औद्योगिक मजदूरों और दलितों की प्रतिदिन हो रहे शोषण की समाप्ति आदि । दलित पैंथर्स द्वारा चलाए गए इस आंदोलन से पढ़े लिखे भारतीय दलित युवकों को एक ऐसा मंच प्राप्त हुआ जहाँ वे सृजनशीलता का उपयोग प्रतिरोध की आवाज बनाकर कर सकते थे ।

भारतीय किसान यूनियन

1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के प्रयास हुए, जिसके चलते नगदी फसल को बाजार के संकट का सामना करना पड़ा । उल्लेखनीय है कि हरित क्रांति की नीति के अन्तर्गत 1960 के अंतिम वर्षों से हरियाणा, पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों को काफी आर्थिक लाभ हुआ था । इसके बाद के वर्षों में इन इलाकों में गन्ना और गेहूँ मुख्य नकदी फसल बन गए थे । **भारतीय किसान यूनियन** ने गन्ने और गेहूँ के सरकारी खरीद मूल्य में बढ़ोत्तरी करने, कृषि से संबंधित उत्पादों के अंतरराज्यीय आवाजाही पर लगी पाबंदियों को समाप्त करने, समुचित दर पर गारंटी युक्त बिजली आपूर्ति करने, किसानों के बकाये कर्ज माफ करने तथा किसानों के लिए पेंशन योजना का प्रावधान करने की माँग की । ये ऐसी माँगे थीं जिन्हें देश के अन्य किसान संगठनों ने भी उठायी । महाराष्ट्र के 'शेतकारी संगठन' ने किसानों द्वारा संचालित आंदोलनों को शहरी औद्योगिक क्षेत्र के विरूद्ध ग्रामीण कृषि क्षेत्र का संग्राम घोषित कर दिया ।

> भारतीय किसान यूनियन के प्रमुख **महेन्द्र सिंह टिकैत** एवं इसके राष्ट्रीय समायोजन समिति के संयोजक **एम0 युद्दी वीर सिंह** थे, जिन्होंने यह चेतावनी दी कि यदि भारत ने कृषि को विश्व व्यापार संगठन के दायरे से बाहर रखने के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाया तो देश को इसके आर्थिक–सामाजिक परिणाम भुगतने होंगे।

सरकार से अपनी माँगे मनवाने के लिए **भारतीय किसान यूनियन** ने रैली, धरना, प्रदर्शन और जेल भरो अभियान जैसे कार्यक्रमों का सहारा लिया । इन कार्यक्रमों में पश्चिमी उत्तर प्रदेश और उसके आसपास के क्षेत्र के हजारो हजार किसानों ने भाग लेकर भारतीय राजीनति में एक दबाव समूह की भूमिका निभायी । 1980 जनवरी में उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में बिजली की दर में की गई बढ़ोत्तरी का विरोध करनेवाले लगभग 20 हजार किसानों ने अपनी गतिविधियों से आर्थिक मसलों पर सरकार को घेरने का प्रयास किया।

ताड़ी–विरोधी आन्दोलन

दक्षिण राज्य आंध्र प्रदेश में ताड़ी विरोधी आंदोलन वहाँ की महिलाओं का स्वतः स्फूर्त आंदोलन था । इस आंदोलन के जरिए महिलाएँ अपने आस–पड़ोस में मदिरा की विक्री पर पाबंदी की माँग कर रही थीं । वर्ष 1992 के सितंबर–अक्टूबर माह में वहाँ की ग्रामीण महिलाएँ शराब के विरूद्ध आंदोलन छेड़कर अपनी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाना चाहती थीं । उल्लेखनीय है कि आंध्र प्रदेश में **नेल्लौर** जिले के एक दूर–दराज गाँव **दुबरगंटा** (Dubarganta) में 1990 के प्रारंभ में महिलाओं के बीच प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम चलाया गया । इस कार्यक्रम में उस गाँव की महिलाएँ बड़ी संख्या में पंजीकरण कराकर कक्षाओं में अपने घर के पुरुषों पर देशी शराब ताड़ी आदि पीने की शिकायतें करती थीं, क्योंकि ग्रामीण पुरुषों को शराब की लत लग चुकी थी जिसके चलते वे शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर होकर घर गृहस्थी के कामों में सहयोग नहीं करते थे । इससे सबसे अधिक परेशानी महिलाओं को इसलिए हो रही थी कि इससे परिवार की अर्थव्यवस्था चरमराने लगी । परिणामस्वरूप, उस जिले के अन्य गाँवों की महिलाएँ ताड़ी बिक्री के विरुद्ध आगे बढ़कर शराब की दूकानों को बंद करने के लिए सरकार पर दबाव डालने लगीं । इस जिले की महिलाओं में आयी ऐसी जागरूकता की खबर पूरे प्रदेश में तेजी से फैली जिसके चलते करीब 5000 गाँवों की महिलाओं ने ताड़ी विरोधी आन्दोलन में भाग लेकर ताड़ी पर प्रतिबंध संबंधी एक प्रस्ताव संबंधित जिले के जिलाधिकारी को भेज दिया। इस प्रकार, **नेल्लौर** जिले का यह आन्दोलन पूरे सूबे में फैल गया ।

बाद में ताड़ी विरोधी यह आंदोलन महिला आन्दोलन का एक हिस्सा बन गया जिसका नारा था– "ताड़ी की बिक्री बंद करो ।" इस साधारण नारे ने पूरे प्रदेश में सिर्फ महिलाओं के जीवन को ही प्रभावित नहीं किया वरन् इसने व्यापक सामाजिक, आर्थिक और राजनीति मुद्दों को देश के सामने रखकर लोकतांत्रिक सरकार की कार्यशैली पर भी प्रश्न चिह्न लगाया । बाद में महिलाओं द्वारा संचालित यह ताड़ी विरोधी आंदोलन कानूनी सुधारों से हटकर सामाजिक टकराव के मुद्दों पर भी खुलेतौर पर विरोध करने लगा । यही कारण था कि 1990 के दशक के दौरान महिला आंदोलन ने समान राजनीतिक प्रतिनिधित्व की बात कर अपने लिए स्थानीय निकायों में अपना प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कराया । संविधान का 73वें एवं 74वें संशोधन अधिनियमों द्वारा स्थानीय राजनीतिक निकायों में उन्हें प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ ।

© BSTBPC WEB COPY, NOT TO BE PUBLISHED

नर्मदा बचाओ आंदोलन

जहाँ चिपको आंदोलन के द्वारा पर्यावरणीय मुद्दों के संरक्षण पर बल दिया गया वहाँ नर्मदा बचाओ आंदोलन ने कृषि क्षेत्र की सरकार द्वारा अनदेखी पर अपना गहरा रोष प्रकट किया । उल्लेखनीय है कि 1980 के बाद आठवें दशक के प्रारंभ में मध्यभारत के नर्मदा घाटी के विकास परियोजनाओं के तहत गुजरात, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश से गुजरनेवाली नर्मदा और उसकी सहायक नदियों पर 30 बड़े बाँध 135 मंझोले बाँध तथा 300 छोटे बाँध बनाने का सरकार द्वारा प्रस्ताव रखा गया । यहाँ उल्लेखनीय है कि प्रस्तावित बाँधों के निर्माण से संबंधित राज्यों के 245 गाँवों को डुबने की आशंका बढ़ गई । परिणामस्वरूप, प्रभावित गाँवों के करीब ढाई लाख लोगों के पुनर्वास का मुद्दा स्थानीय कार्यकर्त्ताओं ने उठाकर सरकार के विरूद्ध आंदोलन खड़ा किया । 1988–89 के दौरान विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों ने स्वयं को नर्मदा आंदोलन के रूप में गठित कर एक बड़े जन संघर्ष का उदाहरण प्रस्तुत किया । आंदोलन के प्रारंभ में आंदोलनकारियों द्वारा यह माँग की गई थी कि प्रस्तावित परियोजना से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित सभी नागरिकों का समुचित पुनर्वास होना चाहिए । इस आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि इसने लोकतांत्रिक पहलूओं को गाँवों तक पहुँचाया, क्योंकि 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' ने इस बात पर बल दिया कि ऐसी परियोजनाओं की निर्णय–प्रक्रिया में स्थानीय समुदायों की भागीदारी से जल,

जंगल, जमीन जैसे प्राकृतिक संसाधनों पर उनका नियंत्रण स्थापित हो सकेगा ।

इस आन्दोलन ने यह भी सवाल उठाया कि लोकतंत्र में कुछ सीमित लोगों के लाभ के लिए अन्य लोगों का नुकसान नहीं होना चाहिए । बाद में इस आंदोलन ने बड़े बाँधों के निर्माण का खुला विरोध करना प्रारंभ किया । 2003 में स्वीकृत राष्ट्रीय पुनर्वास नीति को यदि हम नर्मदा बचाओ जैसे सामाजिक आंदोलनों की उपलब्धि कहें तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

सूचना के अधिकार का आंदोलन

सूचना के अधिकार का आंदोलन जन आंदोलनों की सफलता का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण कहा जा सकता है । इस आंदोलन नें सरकार से एक बड़ी माँग को पूरा कराने में सफलता पाई है । राजस्थान के एक छोटे गाँव से इस संबंध में निकली चिनगारी ने व्यापक रूप धारण करना शुरू कर दिया । 1994 और उसके बाद 1996 में जन सुनवाई का आयोजन किया गया । आंदोलन के दबाव में सरकार को राजस्थान पंचायती राज अधि नियम में संशोधन कर जनता को पंचायत के दस्तावेजों की प्रभावित प्रतिलिपि प्राप्त करने की अनुमति दी । 1996 में सूचना के अधिकार को लेकर दिल्ली में राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया । 2002 में 'सूचना की स्वतंत्रता' नामक एक विधेयक पारित हुआ, लेकिन अनेक त्रुटियों के चलते उसे अमल में नहीं लाया गया। 2004 में सूचना के अधिकार संबंधी विधेयक को भारतीय संसद में उपस्थित किया गया जिसने जून 2005 में राष्ट्रपति की स्वीकृति पाकर अधिनियम का रूप धारण किया ।

सूचना के अधिकार की शुरूआत – 1990 में राजस्थान के एक अति पिछड़े क्षेत्र **भीम तहसील** में सर्वप्रथम उठायी गई । उसके अंतर्गत ग्रामीणों में प्रशासन से अपने वेतन एवं भुगतान के बिल उपलब्ध कराने को कहा । ग्रामीणों को लग रहा था कि उन्हं दी गई मजदूरी में भारी घपला हो रहा है ।

पड़ोसी देशों में जनसंघर्ष एवं आंदोलन

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है । भारतीय लोकतंत्र के आंतरिक द्वंद्व, संघर्ष

एवं आंदोलनों का उल्लेख किया जा चुका है । भारत का लोकतंत्र और भी अधिक सुदृढ़ होगा जब इसके पड़ोसी देशों में लोकतांत्रिक प्रक्रिया चलती रहेगी । उदाहरण के लिए सर्वप्रथम हम नेपाल को ले सकते हैं ।

नेपाल में लोकतांत्रिक आंदोलन– नेपाल के लोकतांत्रिक आंदोलन का उद्देश्य राजा को अपने आदेशों को वापस लेने के लिए विवश करना था । वे ऐसे आदेश थे जिनके द्वारा राजा ने वहाँ के लोकतंत्र को समाप्त कर दिया था । उल्लेखनीय है कि नेपाल में लोकतंत्र 1990 के दशक में कायम हुआ । वहाँ का राजा औपचारिक रूप से राज्य का प्रधान तो बना रहा लेकिन वास्तविक सत्ता का प्रयोग जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा होता रहा । ऐसे संवैधानिक राजतंत्र को राजा **वीरेन्द्र** ने पहले ही स्वीकार कर लिया था । उनकी हत्या के बाद राजा **ज्ञानेन्द्र** लोकतांत्रिक शासन को स्वीकारने की स्थिति में नहीं थे । 2005 में राजा **ज्ञानेन्द्र** ने तत्कालीन प्रधानमंत्री को अपदस्थ ही नहीं किया वरन् जनता द्वारा निर्वाचित सरकार को भी भंग कर दिया । परिणामस्वरूप, अप्रैल 2006 में वहाँ जो आंदोलन खड़ा हुआ, उसका एकमात्र उद्देश्य शासन की बागडोर राजा के हाथ से लेकर जनता के हाथ में सौंपना था ।

नेपाल में लोकतंत्र की स्थापना के लिए वहाँ की संसद के सभी बड़े राजनीतिक दलों ने एक गठबंधन बनाया जिसे हम 'सप्तदलीय गठबंधन' (Seven party alliance) के नाम से जानते हैं । इस गठबंधन ने नेपाल की राजधानी काठमांडू में 4 दिन के बंद का जो आह्वान किया उसका व्यापक प्रभाव नेपाल के लोगों पर पड़ा । करीब 1 लाख लोग प्रतिदिन एकजुट होकर लोकतंत्र की बहाली की माँग कर रहे थे । 23 अप्रैल 2006 के दिन नेपाल में आंदोलनकारियों की संख्या करीब 5 लाख पहुँच गयी । 24 अप्रैल 2006 को राजा **ज्ञानेंद** ने सर्वदलीय सरकार और एक नयी संविधान सभा के गठन की बात स्वीकार कर ली । गठबंधन ने **गिरिजा प्रसाद कोईराला** को अंतरिम सरकार का प्रधानमंत्री चुना । पुनः संसद बहाल हुई जिसने अपनी प्रथम बैठक में अनेक कानून पारित कर राजा के अधिकांश शक्तियों पर पाबंदी लगा दी । उल्लेखनीय है कि नेपाल के लोगों द्वारा लोकतंत्र बहाली के लिए किए गए संघर्ष पूरे विश्व के लिए एक प्रेरणा का स्रोत है ।

बोलिबिया में जन-संघर्ष– बोलिबिया के लोगों ने पानी के निजीकरण के विरूद्ध एक सफल

संघर्ष का प्रारंभ किया । बोलिबिया लैटिन अमेरिका का एक गरीब देश है । **विश्व बैंक** ने जब वहाँ की सरकार पर नगरपालिका द्वारा की जा रही जलापूर्ति से अपना नियंत्रण छोड़ने के लिए दबाव डाला तब सरकार ने **कोचबंबा** शहर में जलापूर्ति का अधिकार एक बहुराष्ट्रीय कंपनी को सौंप दिया जिसने पानी की कीमत में चार गुणा वृद्धि कर दी । वहाँ के घरेलू खपत में पानी का मासिक व्यय 1000 रुपये तक जा पहुँचा । परिणामस्वरूप, वहाँ सरकार के विरुद्ध स्वत: स्फूर्त जनसंघर्ष प्रारम्भ हो गया । सरकार और वहाँ के श्रमिकों, मानवाधिकार कार्यकर्त्ताओं तथा सामुदायिक नेताओं के बीच अनेक बार संघर्ष हुए । जनता के विरुद्ध **मार्शल लॉ** का भी इस्तेमाल किया गया । लेकिन, अंतत: जनता की माँग के आगे सरकार को झुकना पड़ा और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को शहर छोड़ कर भागना पड़ा । सरकार को आंदोलनकारियों की सारी बातें माननी पड़ीं।

बांग्लादेश में लोकतंत्र के लिए संघर्ष– 1971 में बांग्लादेश के निर्माण के बाद उसने अपने देश का संविधान बनाकर अपने को धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक तथा समाजवादी देश घोषित कर दिया । 1975 में **शेख मुजीबुरर्हमान** ने वहाँ के संविधान में संशोधन लाकर संसदीय शासन के स्थान पर अध्यक्षीय शासन–प्रणाली को मान्यता दिलायी तथा वहाँ **अवामी लीग** पार्टी को छोड़कर अन्य सभी राजनीतिक दलों को समाप्त कर दिया गया । परिणामस्वरूप, उनके विरुद्ध जबर्दस्त तनाव और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई । अगस्त 1975 में सेना ने उनके विरुद्ध बगावत कर दी और वे मारे गए । तब से लेकर दिसंबर 2008 तक वहाँ लोकतंत्र की बहाली संबंधी जनसंघर्ष एवं आंदोलन चलते रहे । 29 दिसंबर, 2008 को बांग्लादेश में आम चुनाव हुए । पूर्व प्रधानमंत्री **शेख हसीना** और उनकी पार्टी **अवामी लीग** के नेतृत्त्व वाले गठबंधन को संसदीय चुनाव में ऐतिहासिक सफलता मिली और वहाँ अब लोकतंत्र की हसीन सुबह का खुशनुमा एहसास लोग करने लगे हैं ।

श्रीलंका में लोकतंत्र के लिए संघर्ष– भारत के दक्षिण में अवस्थित **श्रीलंका** दक्षिण एशिया का एक प्रमुख राष्ट्र है । 1948 में इसकी स्वतंत्रता से लेकर अब तक वहाँ लोकतंत्र स्थापित है। फिर भी, श्रीलंका एक गंभीर जातीय समस्या का शिकार बना हुआ है । वहाँ कि तमिल आबादी

ने अलग राजय की माँग कर गंभीर जातीय संघर्ष का रूप ग्रहण कर लिया है। श्रीलंका के तमिलों के प्रति सरकार की उपेक्षापूर्ण बर्ताव एवं तिरस्कार में जातीय संघर्ष का मार्ग प्रशस्त किया।

राजनीतिक दल का अर्थ

अब हम लोकतंत्र के व्यावहारिक पक्षों का अध्ययन करेंगे । लोकतंत्र के व्यावहारिक पक्ष में राजनीतिक दलों का महत्त्वपूर्ण स्थान है । राजनीतिक दल सरकार के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । अब हम राजनीतिक दल के बारे में विस्तार से समझेंगे ।

सामान्यतया राजनीति दल का आशय ऐसे व्यक्तियों के किसी भी समूह से है जो एक समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्य करता है । यदि उस दल का उद्देश्य राजनीतिक कार्य–कलापों से संबंधित होता है तो उसे हम राजनीतिक दल कहते हैं । किसी भी राजनीतिक दल में व्यक्ति एक समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक जुट होते हैं, जैसे मतदान करना, चुनाव लड़ना, नीतियाँ एवं कार्यक्रम तय करना आदि । उल्लेखनीय है कि किसी समान उद्देश्य पर लोगों के अलग–अलग विचार हो सकते हैं, लेकिन जहाँ तक राजनीतिक दल का प्रश्न है उसके सदस्यों का एक समान उद्देश्य पर एक जैसा विचार होता है । साथ ही, किसी एक राजनीहतिक दल के सदस्य समाज के अन्य लोगों को यह समझाने का प्रयास करते हैं कि उनके सामान्य उद्देश्य दूसरे लोगों के उद्देश्यों से बेहतर हैं । इस संदर्भ में हमें एक और बात समझ लेना आवश्यक है कि व्यक्तियों का समूह जब एक राजनीतिक दल के रूप में संगठित होता है तो उनका उद्देश्य सिर्फ **'सत्ता प्राप्त करना'** या **'सत्ता को प्रभावित करना'** होता है । इसके लिए सभी राजनीतिक दल अपनी–अपनी नीतियों और कार्यक्रमों को तैयार करते हैं ।

भारत में दलीय व्यवस्था की शुरूआत **1885** में **भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना** से मानी जाती है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में अनेक राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय राजनीतिक दल अस्तित्व में आये । यहाँ हमलोगों को यह जान लेना आवश्यक है कि विश्व में सर्वप्रथम राजनीतिक दलों की उत्पत्ति ब्रिटेन में हुई । यहाँ 1688 ई० में हुए **गौरवपूर्ण क्रांति** के बाद **ह्विग** (Whig) और **टोरी** (Tory) नामक दो राजनीतिक दलों की नींव पड़ी जो बाद में

ह्विग उदारदल एवं **टोरी अनुदार दल** के नाम से जाना गया । संयुक्त राज्य अमेरिका में संविधान निर्माण के बाद राजनीतिक दलों की उत्पत्ति हुई ।

राजनीतिक दलों के कार्य

लोकतांत्रिक देशों में राजनीतिक दल जीवन के एक अंग बन चुके हैं । इसीलिए उन्हें **'लोकतंत्र का प्राण'** (Life blood of democracy) कहा गया है । लोकतांत्रिक शासन-प्रणाली में राजनीतिक दलों के निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं–

1. नीतियाँ एवं कार्यक्रम तय करना– राजनीतिक दल जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए नीतियाँ एवं कार्यक्रम तैयार करते हैं । इन्हीं नीतियों और कार्यक्रमों के आधार पर ये चुनाव भी लड़ते हैं । राजनीतिक दल भाषण, टेलीविजन, रेडियो, समाचार-पत्र आदि के माध्यम से अपनी नीतियाँ एवं कार्यक्रम जनता के सामने रखते हैं और मतदाताअें को अपनी ओर आकर्षित करने की कोशिश करते हैं । मतदाता भी उसी राजनीतिक दल को अपना समर्थन देते हैं जिसकी नीतियाँ एवं कार्यक्रम जनता के कलयाण के लिए एवं राष्ट्रीय हित को मजबूत करनेवाला होता है ।

2. शासन का संचालन– राजनीतिक दल चुनावों में बहुमत प्राप्त करके सरकार का निर्माण करते हैं । जिस राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त नहीं होता है वे विपक्ष में बैठते हैं जिन्हें विपक्षी दल कहा जाता है । जहाँ एक ओर सत्ता पक्ष शासन का संचालन करता है वही विपक्षी दल सरकार पर नियंत्रण रखता है और सरकार को गड़बड़ियाँ करने से रोकता है ।

3. चुनावों का संचालन– जिस प्रकार लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था में राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है, उसी प्रकार दलीय व्यवस्था में चुनाव का होना भी आवश्यक है । हमें पहले से यह जानकारी प्राप्त है कि सभी राजनीतिक दल अपनी विचारधाराओं और सिद्धांतों के अनुसार कार्यक्रमों एवं नीतियाँ तय करते हैं । यही कार्यक्रम एवं नीतियाँ चुनाव के दौरान जनता के पास रखते हैं जिसे **चुनाव घोषणा-पत्र** कहते हैं । राजनीतिक दल अपने उम्मीदवारों को खड़ा करने और हर तरीके से उन्हें चुनाव जीताने का प्रयत्न करते हैं । इसीलिए, राजनीतिक दल का एक प्रमुख कार्य चुनावों का संचालन भी है ।

4. लोकमत का निर्माण– लोकतंत्र में जनता की सहमति या समर्थन से ही सत्ता प्राप्त होती है । इसके लिए शासन की नीतियों पर लोकमत प्राप्त करना होता है और इस तरह के लोकमत का निर्माण राजनीतिक दल के द्वारा ही हो सकता है । राजनीतिक दल लोकमत निर्माण करने के लिए जनसभाएँ, रैलियों, समाचारपत्र, रेडियो, टेलीविजन आदि का सहारा लेते हैं।

5. सरकार एवं जनता के बीच मध्यस्थ का कार्य– राजनीति दलों का एक प्रमुख कार्य है जनता और सरकार के बीच मध्यस्थता करना । राजनीतिक दल ही जनता की समस्याओं और आवश्यकताओं को सरकार के सामने रखते हैं और सरकार की कल्याणकारी योजनाओं और कार्यक्रमों को जनता तक पहुँचाते हैं । इस तरह राजनीतिक दल सरकार एवं जनता के बीच पूल–निर्माण का कार्य करते हैं ।

6. राजनीतिक प्रशिक्षण– राजनीतिक दल मतदाताओं को राजनीतिक प्रशिक्षण देने का भी काम करते हैं । राजनीतिक दल खासकर चुनावों के समय अपने समर्थकों को राजनैतिक कार्य जैसे– मतदान करना, चुनाव लड़ना, सरकार की नीतियों की आलोचना करना या समर्थन करना आदि बताते हैं । इसके अलावा, सभी राजनीतिक दल अपनी राजनीतिक एवं शैक्षिक गतिविधि याँ तेजकर उदासीन मतदाताओं को अपने से जोड़ने का भी काम करते हैं जिससे लोगों में राजनीतिक चेतना की जागृति होती है ।

7. दलीय कार्य– प्रत्येक राजनीतिक दल कुछ दल संबंधी कार्य भी करते हैं, जैसे– अधि क से अधिक मतदाताओं को अपने दल का सदस्य बनाना, अपनी नीतियाँ एवं कार्यक्रम का प्रचार–प्रसार करना तथा दल के लिए चंदा इकट्ठा करना आदि ।

8. गैर–राजनीतिक कार्य– राजनीतिक दल न केवल राजनैतिक कार्य करते हैं बल्कि गैर–राजनीतिक कार्य भी करते हैं, जैसे प्राकृतिक आपदाओं– बाढ़, सुखाड़ भूकंप आदि के दौरान राहत संबंधी कार्य आदि ।

लोकतंत्र में राजतनीतिक दलों की आवश्यकता क्यों ?

अब तक हमने यह समझा कि राजनीतिक दल लोकतांत्रिक शासन–व्यवस्था में काफी

महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। जनता की विभिन्न समस्याओं के समाधान में राजनीतिक दल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अब हमारे सामने यह प्रश्न उठता है कि आधुनिक लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की क्यों आवश्यकता हुई ? क्या राजनीतिक दलों के अभाव में भी लोकतांत्रिक शासन–व्यवस्था सफल ढंग से चल सकती है ? दरअसल राजनीतिक दल को **'लोकतंत्र का प्राण'** कहा जाता है। इसीलिए लोकतांत्रिक शासन–व्यवस्था में राजनीतिक दलों की आवश्यकता को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। किसी भी शासन–व्यवस्था में किसी भी समस्या पर हजारों लोग अपना विचार रखते हैं। किन्तु, इन विचारों और दृष्टिकोणों का कोई मतलब नहीं रह जाता है जब तक इन विचारों को किसी दल के विचारों से न जोड़ा जाए। राजनीतिक दल देश के लोगों की भावनाओं एवं विचारों को जोड़ने का काम करते हैं। इस दृष्टि से हमारे लिए राजनीतिक दलों की आवश्यकता है। इसके अलावा, लोकतंत्र में राजनीतिक दल की आवश्यकता इसलिए भी है कि यदि दल नहीं होगा तो सभी उम्मीदवार निर्दलीय होंगे। उम्मीदवार अपनी नीतियाँ राष्ट्रहीत में न बनाकर उस क्षेत्र विशेष के लिए बनाएँगे जिन क्षेत्रों से वे चुनाव लड़ रहे हैं। ऐसी स्थिति होने से देश की एकता और अखंडता खतरे में पड़ जाएगी और देश का विकास रुक जाएगा। इस समस्या से बचने के लिए राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है। राजनीतिक दलों की नीतियाँ एवं कार्यक्रम समग्र एवं व्यापक होता है न कि किसी क्षेत्र विशेष के लिए। राजनीतिक दल के सदस्य सभी जाति, धर्म, क्षेत्र एवं लिंग के होते हैं। इसके चलते राजनीतिक दल सभी लोगों की समस्याओं को समेटकर सरकार के सामने रखते हैं और उनके समाधान का प्रयास करते हैं। इस तरह हम कह सकते हैं कि लोकतंत्र में राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है।

राजनीतिक दलों के बीच प्रतियोगिता एवं लोकमत के सशक्तिकरण पर इनके प्रभाव

दुनिया में दलीय व्यवस्था के तीन रूप प्रचलित है। (i) एकदलीय व्यवस्था, (ii) द्विदलीय व्यवस्था और (iii) बहुदलीय व्यवस्था। इन तीनों प्रकार के दलीय व्यवस्थाओं में द्विदलीय एवं बहुदलीय व्यवस्था में राजनीतिक दलों के बीच प्रतियोगिता होती रहती है। सामान्यत: लोगों में

यह धारणा प्रचलित है कि लोकतंत्र में दलों के बीच प्रतियोगिता अच्छी बात होती है । दलों के बीच प्रतियोगिता का मुख्य कारण सत्ता की प्राप्ति होता है । सभी दलों का भी अंतिम उद्देश्य 'सत्ता की प्राप्ति' होता है । इसके लिए सभी राजनीतिक दल ज्यादा-से-ज्यादा लोगों का समर्थन प्राप्त करना चाहते हैं । राजनीतिक दलों के बीच प्रतियोगिता होने से मतदाताओं के पास राजनीतिक दलों को समर्थन एवं विरोध का विकल्प खुला रहता है । इसीलिए राजनीतिक दलों के बीच स्वस्थ प्रतियोगिता लोकतंत्र के लिए अच्छी बात मानी जाती है ।

हमलोगों को पता है कि राजनीतिक दल **'लोकतंत्र का प्राण है'** । राजनीतिक दलों को लोकतंत्र का आधार स्तम्भ भी माना जाता है । इसीलिए हम यह भी मान सकते हैं कि राजनीतिक दलों के बीच प्रतियोगिता होने से लोकतंत्र मजबूत होता है । राजनीतिक दलों में प्रतियोगिता होने से सभी दल राष्ट्र एवं जनता के लिए एक से बढ़कर एक कलयाणकारी कार्यक्रम एवं नीतियाँ बनाते हैं । सभी दल जनता की समस्याओं को जोरदार ढंग से उठाते हैं और इन समस्याओं को जल्द-से-जल्द समाधान करने का प्रयत्न करते हैं । राजनीतिक दलों के बीच डर बना रहता है कि यदि जनता की इच्छाओं, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुसार वे काम नहीं करेंगे तो जनता का समर्थन उन्हें प्राप्त नहीं होगा और वे अपने अंतिम उद्देश्य जो सत्ता की प्राप्ति है, उसमें सफल नहीं हो पायेंगे । जिस दल की सरकार बनती है वह दल अपनी योजनाओं से जनता को लाभान्वित करना चाहता है क्योंकि जनता के पास विकल्प होते हैं वह दूसरे राजनीतिक दलों की सरकार भी बना सकती है । अतः हम कह सकते हैं कि राजनीतिक दलों में प्रतियोगिता होने से लोकतंत्र और मजबूत होता है ।

राजनीतिक दलों का राष्ट्रीय विकास में योगदान

किसी भी देश का विकास वहाँ के राजनीतिक दलों की स्थिति पर निर्भर करता है । जिस देश में राजनीतिक दलों के विचार, सिद्धांत एवं दृष्टिकोण ज्यादा व्यापक होंगे उस देश का राष्ट्रीय विकास उतना ही ज्यादा होगा । इसीलिए कहा जाता है कि किसी भी देश के राष्ट्रीय विकास में राजनीतिक दलों की मुख्य भूमिका होती है । दरअसल राष्ट्रीय विकास के लिए जनता को

जागरूक, समाज एवं राज्य में एकता एवं राजनीतिक स्थायित्व का होना आवश्यक है । इन सभी कार्यों में राजनीतिक दल ही मुख्य भूमिका निभाते हैं । लोकतांत्रिक देशों में साधारणत: यह देखने को मिलता है कि मात्र नागरिक को जिस कार्य के बदले जितना मिलता है उसी में वह संतुष्ट रहता है । उससे जयादा पाने की इच्छा उसमें कम रहती है । इसका मुख्य कारण जनजागरूकता का अभाव रहता है । ऐसी स्थिति में राजनीतिक दल ही नागरिकों को अपने अधिकारों के प्रति सजग रहने के लिए प्रेरित करते हैं ।

राष्ट्रीय विकास के लिए राज्य एवं समाज में एकता स्थापित होना आवश्यक है । इसके लिए राजनीतिक दल एक महत्त्वपूर्ण संस्था के रूप में काम करता है । राजनीतिक दलों में विभिन्न जातियों, धर्मों, वर्गों एवं लिंगों के सदस्य होते हैं । ये सभी अपने-अपने जाति, धर्म, वर्ग एवं लिंग का प्रतिनिधित्व भी करते हैं । ये प्रतिनिधि किसी तरह के विवाद उत्पन्न होने पर तुरंत समाधान कर लेते हैं जिससे राज्य में एकता कायम रहती है । राष्ट्रीय विकास की एक प्रमुख शर्त राजनीतिक स्थायित्व भी है । राजनीतिक दल ही किसी देश में राजनीतिक स्थायित्व ला सकते हैं । इसके लिए आवश्यक है कि राजनीतिक दल सरकार के विरोध की जगह उसकी रचनात्मक आलोचना करें । राष्ट्रीय विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि शासन के निर्णयों में सबकी सहमति और सभी लोगों की भागीदारी हो । इस प्रकार के काम भी राजनीतिक दल ही करते हैं। राजनीतिक दल संकट के समय रचनात्मक कार्य भी करते हैं, जैसे प्राकृतिक आपदा के दौरान राहत का कार्य आदि । राष्ट्रीय विकास के लिए सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की नीतियाँ एवं कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं । लोकतांत्रिक देशों में इस तरह की नीतियों एवं कार्यक्रम को विधानमंडल से पास होना आवश्यक होता है । सत्ता पक्ष एवं विपक्ष के सहयोग से विधानमंडल ऐसे नीतियाँ एवं कार्यक्रम पास कराने में सहयोग करते हैं । इन्हीं सब बातों के आधार पर हम समझ सकते हैं कि राजनीतिक दल राष्ट्रीय विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

राजनीतिक दलों के लिए प्रमुख चुनौतियाँ

हमलोग जानते हैं कि लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था में शासन का संचालन किसी-न-किसी राजनीतिक दल द्वारा किया जाता है । हम यह भी जानते हैं कि जिस शासन-व्यवस्था में जनता

की इच्छा, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा नहीं किया जाता है, या शासन–व्यवस्था में किसी तरह की गड़बड़ियाँ होती हैं तो इसकी सारी जिम्मेवारी राजनीतिक दलों पर ही होती है और यह आरोप लगाया जाता है कि राजनीतिक दल ठीक ढंग से काम नहीं कर रहे हैं । सही अर्थ में राजनीतिक दलों के सामने कुछ चुनौतियाँ हैं जो उन्हें अपने उद्देश्यों में सफल नहीं होने देतीं। ये चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं–

1. आंतरिक लोकतंत्र की कमी– लोकतांत्रिक देशों के राजनीतिक दलों के सभी अधिकार एक व्यक्ति में या कुछ व्यक्तियों के समूह में सिमट गए हैं । दलों के अंदर लिए जाने वाले निर्णयों में दलों के सभी सदस्यों से सहमति नहीं ली जाती है । दलों के विभिन्न पदों पर दल के ही प्रमुख नेताओं एवं उनके सगे–संबंधियों का कब्जा होता है । इसके लिए चुनाव भी समय पर नहीं होते हैं । दलों के भीतर लिए गए फैसलों की जानकारी भी सभी लोगों को नहीं हो पाती है । भारत जैसे देश में राजनीतिक दलों के अंदर लोकतांत्रिक व्यवस्था का अभाव है जो उनके लिए गंभीर चुनौती है ।

2. नेतृत्व का संकट– प्रायः भारत के सभी राजनीतिक दलों में नेतृत्व का संकट है । सही अर्थ में आज अधिकांश राजनीतिक दलों में कोई ऐसा नेता नहीं है जो सर्वमान्य हो और वह दल को सही दिशा दे सके। इसके अलावा, राजनीतिक दलों में युवा एवं महिला नेतृत्व का भी अभाव देखा गया है । देश की युवा पीढ़ी नौकरी, व्यापार और व्यवसाय के पीछे भाग रही है । युवाओं को राजनीति में अपना भविष्य सुरक्षित नहीं लगता है । फलतः राजनीतिक दलों में नेतृत्व का संकट हो गया है ।

3. वंशवाद– प्रायः सभी राजनीतिक दलों के नेताओं को यह देखा जा रहा है कि लोग दलों के शीर्ष पर बैठे हैं और वे अनुचित लाभ लेते हुए अपने सगे–संबंधियों, दोस्तों और रिश्तेदारों को दल के प्रमुख पदों पर बैठाते हैं । सामान्य कार्यकर्त्ता को दलों में ऊपर के पदों पर बैठने की गुंजाइश काफी कम रहती है । भारत में काँग्रेस सहित अन्य राजनीतिक आदि दलों पर वंशवाद का आरोप लगते रहे हैं । अतः वंशवाद की समाप्ति राजनीतिक दलों के सामने प्रमुख चुनौती है।

© BSTBPC NOT TO BE PUBLISHED

4. कालेधन एवं अपराधियों का प्रभाव– आज राजनीतिक दलों में काले धन एवं अपराधियों के बढ़ते प्रभाव के चलते महत्त्वपूर्ण चुनौतियाँ हैं। हमें पता है कि आज चुनाव लड़ने में काफी रुपया–पैसा खर्च होते हैं। फलस्वरूप, ये राजनीतिक दल जायज एवं नाजायज तरीका अपनाने से परहेज नहीं करते हैं। चुनाव में पूँजीपतियों को उम्मीदवार के रूप में उतारा जाता है जो चुनावों में अपने काले धन का प्रयोग करते हैं। इसके अलावा, राजनीतिक दलों को चुनाव के समय पूँजीपतियों से काफी रुपए सहयोग के रूप में मिलता है जो एक तरह से काला धन ही होता है। ये पूँजीपति चुनाव के बाद राजनीतिक दलों से अनुचित लाभ लेते हैं।

आजकल राजनीतिक दलों में अपराधियों का भी प्रभाव बढ़ा है। सभी राजनीतिक दल चुनाव के समय अपराधियों से मदद लेते हैं और चुनाव जीतने के बाद अपराधा वृद्धि में उनकी मदद करते हैं।

5. सिद्धांतहीनता की स्थिति– राजनीतिक दलों में आजकल सिद्धांतहीनता की स्थिति बनी हुई है। कोई भी दल अपने मूल सिद्धांत पर कायम नहीं है और सत्ता को प्राप्त करने के लिए वे अपने सिद्धांतों को भी छोड़ दे रहे हैं, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों के राजनीतिक दल अपने गठन के समय से लेकर अभी तक अपने मूल सिद्धांत पर कायम हैं।

6. अवसरवादी गठबंधन– भारत जैसे बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था वाले देशों में गठबंधन की राजनीति की परंपरा कायम हुई है, क्योंकि किसी भी दल को सरकार बनाने के लिए आवश्यक बहुमत नहीं मिल पा रहा है। इसीलिए राजनीतिक दल चुनाव के पहले और चुनाव के बाद ऐसे दलों से गठबंधन करते हैं। इन दलों के सिद्धांतों एवं विचारों में काफी भिन्नता होती है। कभी–कभी ऐसा भी होता है कि बहुत से दल एक दूसरे के विरोध में चुनाव लड़ते हैं और चुनाव के बाद सरकार निर्माण के समय ये आपस में गठबंधन कर लेते हैं। इस तरह के गठबंधन अवसरवादिता का परिचायक है। उदाहरणस्वरूप 2004 में लोकसभा के आम चुनाव में काँग्रेस ने दलों के सहयोग से सरकार बनायी। इस तरह के गठबंधन से राजनीतिक दलों में अनुशासनहीनता आती है और लोकतंत्र के लिए भी यह शुभ नहीं है।

राजनीतिक दलों को प्रभावशाली बनाने के उपाय

हमने अभी तक यह समझा कि राजनीतिक दलों के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं । अब हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि राजनीतिक दलों को उपर्युक्त चुनौतियों से सामना करने के लिए दलों को प्रभावी कैसे बनाया जा सकता है ? अगर राजनीतिक दल इन चुनौतियों का सामना नहीं कर पायेंगे तो लोकतांत्रिक व्यवस्था अपने उद्देश्यों में असफल होकर चरमरा जाएगी । अतः राजनीतिक दलों को प्रभावशाली बनाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए गए हैं जो हैं–

1. दलबदल कानून लागू होना चाहिए– विधायकों और सांसदों के दलबदल को रोकने के लिए संविधान में संशोधन लाकर कानून बनाया गया है । इन कानूनों को पूर्णरूप से बिना किसी लाभ के लागू होना चाहिए ।

2. उच्च न्यायालय के आदेश का पालन होना चाहिए– उच्चतम न्यायालय ने राजनीतिक दलों के काले धन का दुरुपयोग एवं इसके अंदर अपराधियों के बढ़ते वर्चस्व को रोकने के लिए एक आदेश जारी किया है कि चुनाव लड़नेवाले सभी उम्मीदवार अपनी सम्पत्ति का और अपने खिलाफ चल रहे अपराधिक मामलों का ब्योरा चुनाव अधिकारी को दें । न्यायालय ने ऐसे उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने से रोक लगा दिया जिनपर गंभीर किस्म के अपराध का आरोप लगा हो और उनपर मुकदमा चल रहा हो । अतः न्यायालय के ऐसे आदेशों को लागू होने से राजनीतिक दलों में अपराधियों की संख्या में कमी होगी और राजनीतिक दल प्रभावशाली होंगे ।

3. राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र बहाल होना चाहिए– राजनीतिक दलों को प्रभावी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि सभी राजनीतिक दल अपने–अपने संविधान का पालन करें, समय–समय पर सांगठनिक चुनाव हो और दल के सभी सदस्यों को विभिन्न पदों पर बैठने का समान अवसर मिले ।

4. राजनीतिक दल महिलाओं और युवाओं को उचित प्रतिनिधित्व देकर अपने प्रभाव में वृद्धि कर सकते हैं । युवाओं को राजनीतिक दलों में आने से दलों को नई ऊर्जा एवं दिशा मिलेगी।

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE PUBLISHED

5. राजनीतिक दलों को प्रभावी बनाने के लिए एक सुझाव यह भी दिया जा सकता है कि चुनाव का खर्च सरकार द्वारा उठाया जाए। पेट्रोल, कागज एवं कपड़ा, टेलीफोन आदि जो चुनाव में उपयोग होते हैं, सरकार द्वारा उपलब्ध कराया जाए।

यदि राजनीतिक दल एवं सरकार इन सुझावों पर ध्यान दें तो राजनीतिके दलों को प्रभावी बनाया जा सकता है। इसके अलावा, राजनीतिक दलों को प्रभावी बनाने के लिए स्वयं पहल करनी चाहिए। विपक्ष की भूमिका निभाकर और सरकार को रचनात्मक सहयोग देकर स्वयं को प्रभावी बनाया जा सकता है।

भारत के प्रमुख राजनीतिक दलों का परिचय

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक दलों के दो स्वरूप देखने को मिलते हैं– एक वैसे सामाजिक दल हैं जिनका अस्तित्व पूरे देश में होता है। इनके कार्यक्रम एवं नीतियाँ राष्ट्रीय स्तर के होते हैं। इनकी इकाइयाँ राज्य स्तर पर भी होती हैं। इन्हें **राष्ट्रीय राजनीतिक दल** कहते हैं। दूसरा, वैसे राजनीतिक दल जिनके कार्यक्रम, नीतियाँ एवं विचारधारा किसी राज्य या क्षेत्र विशेष तक ही सीमित होते हैं। ऐसे दल को आमतौर पर **राज्य स्तरीय** या **क्षेत्रीय दल** भी कहा जाता है ं। कौन राजनीतिक दल राष्ट्रीय राजनीतिक दल हैं और कौन राज्य स्तरीय, इसका निध ीरण निर्वाचन आयोग ही करता है। राजनीतिक दलों के चुनाव–चिह्न का निर्धारण भी चुनाव आयोग करता है।

राष्ट्रीय राजनीतिक दल की मान्यता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दलों को लोकसभा या विधानसभा के चुनावों में 4 या अधिक राज्यों द्वारा कुल डाले गए वैध मतों का 6 प्रतिशत प्राप्त करने के साथ किसी राज्य या राज्य से लोकसभा की कम–से–कम 4 सीटों पर विजयी होना आवश्यक है या लोकसभा में कम–से–कम 4 सीटों पर विजयी होना आवश्यक है या लोकसभा में कम–से–कम 2 प्रतिशत सीटें अर्थात् 11 सीटें जीतना आवश्यक है जो कम–से–कम तीन राज्यों से होनी चाहिए। इसी तरह राज्य स्तरीय राजनीतिक दल की मान्यता प्राप्त करने के लिए उस दल को लोकसभा या विधान सभा के चुनावों में डाले गए वैध मतों का कम–से–कम 6 प्रतिशत

मत प्राप्त करने के साथ–साथ राज्य विधानसभा की कम–से–कम 3 प्रतिशत सीटें या 3 सीटें जीतना आवश्यक है ।

भारत के राष्ट्रीय एवं क्षेत्रसीय दल

आइए, हम भारत के कुछ प्रमुख राजनीतिक दलों के बारे में जानकारी प्राप्त करें । सर्वप्रथम हम **राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दलों** के बारे में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करेंगे ।

भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस– भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना 1885 में हुई । काँग्रेस पार्टी में कई बार विभाजन हुआ । अभी इसे **काँग्रेस (ई)** के नाम से भी जाना जाता है । काँग्रेस पार्टी का मुख्य उद्देश्य भारत के लोगों की उन्नति करना तथा शांतिमय और संवैधानिक उपायों से भारत में समाजवादी राज्य कायम करता है जो संसदीय जनतंत्र पर आधारित हो, जिसमें अवसर और राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक अधिकारों की समानता हो तथा जिसका लक्ष्य विश्व बंधुत्व हो ।

काँग्रेस एक धर्म निरपेक्ष पार्टी है । यह विश्व के पुराने राजनीतिक दलों में से एक है । इसने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से 1971 तक और 1980 से 1989 तक देश पर शासन किया । 2004 से संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) बनाकर यह दल देश पर शासन कर रहा है ।

भारतीय जनता पार्टी– 1980 में **भारतीय जनसंघ** के स्थान पर भारतीय जनता पार्टी का गठन हुआ । भारतीय जनता पार्टी के प्रथम अध्यक्ष **अटल बिहारी वाजपेयी** को बनाया गया । भारतीय जनता पार्टी का मुख्य लक्ष्य भारत की प्राचीन संस्कृति और मूल्यों से प्रेरणा लेकर आधुनिक भारत का निर्माण करना है । भारतीय जनता पार्टी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को बढ़ावा देता है तथा समान नागरिक संहिता को लागू करने के पक्षधर है । यह जम्मू- कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा देने के खिलाफ है । भारतीय जनता पार्टी राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) बनाकर 1998 में सत्ता में आई और 2004 तक देश पर शासन किया ।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (सी0 पी0 आई0)– भारत में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना 1925 ई० में **एस0 ए0 डांगे** के प्रयत्नों से हुई । भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र में आस्था रखती है और सांप्रदायिकता का विरोध करती है । यह संसदीय लोकतंत्र में किसानों, गरीबों एवं मजदूरों के हितों की रक्षा करती है । इस पार्टी का जनाधार मुख्य रूप से

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE REPUBLISHED

केरल, पं० बंगाल तथा बिहार आदि राज्यों में है । भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी 2004 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन शामिल होकर केंद्र सरकार को बाहर से समर्थन दिया ।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी–मार्क्सवादी (सी0 पी0 आई0 एम0)– 1964 में साम्यवादी दल में विभाजन हो गया और एक नए दल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) का जन्म हुआ । इसके प्रमुख नेता ज्योति बसु, सोमनाथ चटर्जी, ए० के० गोपालन तथा वी० राममूर्ति हैं ।

यह दल मार्क्स एवं लेनिन के विचारों में आस्था रखते हुए समाजवाद, धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतंत्र का समर्थन करता है । इस दल के नेता किसानों और मजदूरों की तानाशाही कायम करना चाहते हैं । इस पार्टी का मानना है कि चुनाव के माध्यम से सामाजिक एवं आर्थिक न्याय का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है । यह दल भी 2004 में केन्द्र में गठित यू० पी० ए० सरकार को बाहर से समर्थन देकर सरकार में शामिल हुआ ।

बहुजन समाज पार्टी (बसपा)– बहुजन समाज पार्टी का जन्म अखिल भारतीय पिछड़ी एवं अल्पसंख्यक समुदाय कम्रचारी महासंघ से हुआ । बसपा की स्थापना 1984 में श्री काशीराम ने किया । इस पार्टी का मुख्य विचारधारा दलितों, पिछडों और अहल्पसंख्यकों को एकजुट कर सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करना है । इसका जन्म स्थल उत्तर प्रदेश रहा है, इसलिए इसका मुख्य आधार उत्तर प्रदेश में ही है । अब इसका जनाधार बढ़कर पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, मध्य प्रदेश एवं बिहार तक हो गया है ।

राष्ट्रीय जनता दल (राजद)– 1997 में जनता दल में विभाजन हो गया और बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनता दल का गठन हुआ । राष्ट्रीय जनता दल समाज में सामाजिक न्याय की स्थापना पर बल देता है। यह दल पीछड़ों, दलितों एवं अल्पसंख्यकों को एकजूट कर सत्ता प्राप्त करने पर बल देता है। राजद संप्रदायवाद एवं साम्राज्यवाद का विरोध करता है और धर्मनिरपेक्षता में विश्वास करता है।

जनता दल यूनाइटेड (जे0 डी0 यू0)– 1999 में **जनता दल** से विभाजन होकर **शरद यादव** के नेतृत्व में **जनता दल** (यूनाइटेड) का गठन हुआ । बाद में **जार्ज फर्णांडीस** के नेतृत्व वाला **समता पार्टी** का **जनता दल** (यूनाइटेड) में विलय हो गया । इस पार्टी का मुख्य उद्देश्य है– समाजवाद

की स्थापना कर सामाजिक समरसत्ता में वृद्धि करना । यह दलितों, पिछड़ों एवं अल्पसंख्यकों का विकास कर सामाजिक न्याय की स्थापना करना चाहता है । यह राज्यों के विशेष अधिकारों की माँग करता है ।

लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा)– वर्ष 2000 में **राम विलास पासवान** के नेतृत्व में लोक जनशक्ति पार्टी का गठन हुआ । इस पार्टी का मुख्य उद्देश्य है– दलितों, पिछड़ों एवं अल्पसंख्यकों का विकास करना । यह पार्टी भी सामाजिक न्याय की स्थापना पर बल देती है । **लोजपा** राज्यों की स्वायत्तता की बात करता है और लघु उद्योग को प्रोत्साहित करने पर बल देता है ताकि युवकों को ज्यादा–से–ज्यादा रोजगार उपलब्ध हो सके ।

समाजवादी पार्टी– **मुलायम सिंह** के नेतृत्व में सन् 1992 में समाजवादी पार्टी का गठन हुआ। यह दल राष्ट्रीय एवं स्वदेशी कंपनियों की स्थापना पर बल देता है और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का विरोध करता है । यह दल कृषि के विकास पर विशेष जोर देता है । इसका मुख्य जनाधार उत्तर प्रदेश में है । लेकिन, अब इसका जनाधार बढ़कर बिहार, पंजाब, मध्य प्रदेश आदि तक पहुँच गया है ।

झारखंड मुक्ति मोर्चा (झामुमो)– झारखंड मुक्ति मोर्चा का गठन 1973 ई० में बिहार में हुआ । झारखण्ड राज्य बनाने के बाद इस मोर्चा का मुख्य जनाधार झारखण्ड राजय में है । इसका अस्तित्व उड़ीसा, पं० बंगाल राज्यों में भी देखने को मिलता है ।

© BSTBPC WEB COPY NOT TO BE REPUBLISHED

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. वर्ष 1975 भारतीय राजनीति में किस लिए जाना जाता है ?
   (क) इस वर्ष आम चुनाव हुए थे
   (ख) श्रीमती इंदिरा गाँधी प्रधानमंत्री बनी थी
   (ग) देश के अंदर आपातकाल लागू हुआ था
   (घ) जनता पार्टी की सरकार बनी थी

2. भारतीय लोकतंत्र में सत्ता के विरुद्ध जन आक्रोश किस दशक से प्रारंभ हुआ ?
   (क) 1960 के दशक से (ख) 1970 के दशक से
   (ग) 1980 के दशक से (घ) 1990 के दशक से
3. बिहार में संपूर्ण क्रांति का नेतृत्व निम्नलिखित में से किसने किया ?
   (क) मोरारजी देशाई (ख) नीतीश कुमार
   (ग) इंदिरा गाँधी (घ) जयप्रकाश नारायण
4. भारत में हुए 1977 में आम चुनाव में किस पार्टी को बहुमत मिला था ?
   (क) काँग्रेस पार्टी को (ख) जनता पार्टी को
   (ग) कम्युनिस्ट पार्टी (घ) किसी पार्टी को भी नहीं
5. 'चिपको आन्दोलन' निम्नलिखित में से किससे संबंधित नहीं है ?
   (क) अंगू के पेड़ काटने की अनुमति से (ख) आर्थिक शोषण से मुक्ति से
   (ग) शराबखोरी के विरुद्ध आवाज से (घ) काँग्रेस पार्टी के विरोध से
6. 'दलित पैंथर्स' के कार्यक्रम निम्नलिखित में से कौन संबंधित नहीं है ?
   (क) जाति प्रथा का उन्मुलन (ख) दलित सेना का गठन
   (ग) भूमिहीन गरीब किसान की उन्नति (घ)औद्योगिक मजदूरों का शोषण से मुक्ति
7. निम्नलिखित में से कौन 'भारतीय किसान यूनियन' के प्रमुख नेता थे ?
   (क) मोरारजी देसााई (ख) जयप्रकाश नारायण
   (ग) महेंदर सिंह टिकैत (घ) चौधरी चरण सिंह
8. 'ताड़ी विरोधी आंदोलन' निम्नलिखित में से किस प्रांत में शुरू किया गया ?
   (क) बिहार (ख) उत्तर प्रदेश
   (ग) आंध्र प्रदेश (घ) तमिलनाडू
9. 'नर्मदा घाटी परियोजना' किन राज्यों से संबंधित है ।
   (क) बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश
   (ख) तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक
   (ग) पं० बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब
   (घ) गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश

10. 'सूचना के अधिकार आंदोलन' की शुरूआत कहाँ से हुई ?
    (क) राजस्थान (ख) दिल्ली
    (ग) तमिलनाडु (घ) बिहार
11. 'सूचना के अधिकार' संबंधी कानून कब बना ?
    (क) 2004 में (ख) 2005 में
    (ग) 2006 में (घ) 2007 में
12. नेपाल में सप्तदलीय गठबंधन का मुख्य उद्देश्य क्या है ?
    (क) राजा को देश छोड़ने पर मजबूर करना
    (ख) लोकतंत्र की स्थापना करना
    (ग) भारत-नेपाल के बीच संबंधों को और बेहतर बनाना
    (घ) सर्वदलीय सरकार की स्थापना करना
13. बोलिविया में जनसंघर्ष का मुख्य कारण थे
    (क) पानी की कीमत में वृद्धि
    (ख) खाद्यान्न की कीमत में वृद्धि
    (ग) पेट्रोल की कीमत में वृद्धि
    (घ) जीवन रक्षक दवाओं की कीमत में वृद्धि
14. श्रीलंका कब आजाद हुआ ?
    (क) 1947 में (ख) 1948 में
    (ग) 1949 में (घ) 1950 में
15. राजनीतिक दल का आशय है–
    (क) अफसरों के समूह से (ख) सेनाओं के समूह से
    (ग) व्यक्तियों के समूह से (घ) किसानों के समूह से
16. निम्नलिखित में से कौन-सा प्रमुख उद्देश्य प्राय: सभी राजनीति दलों का होता है ?
    (क) सत्ता प्राप्त करना (ख) सरकारी पदों को प्राप्त करना
    (ग) चुनाव लड़ना (घ) इनमें से कोई नहीं

© BSTBPC WEB COPY, NOT TO BE PUBLISHED

17. राजनीतिक दलों की नींव सर्वप्रथम किस देश में पड़ी ?

(क) ब्रिटेन में (ख) भारत में

(ग) फ्रांस में (घ) संयुक्त राज्य अमेरिका में

18. निम्नलिखित में से किसे लोकतंत्र का प्राण माना जाता है ?

(क) सरकार को (ख) न्यायपालिका को

(ग) संविधान को (घ) राजनीतिक दल को

19. निम्नलिखित में से कौन-सा कार्य राजनीतिक दल नहीं करता है ?

(क) चुनाव लड़ना (ख) सरकार की आलोचना करना

(ग) प्राकृतिक आपदा में राहत से (घ) अफसरों की बहाली संबंधित कार्य

20. निम्नलिखित में से कौन-सा विचार लोकतंत्र में राजनीतिक दलों से मेल नहीं खाता है ?

(क) राजनीतिक दल लोगों की भावनाओं एवं विचारों को जोड़कर सरकार के सामने रखता है।

(ख) राजनीतिक दल देश में एकता और अखंडता स्थापित करने का साधन है ।

(ग) देश के विकास के लिए सरकारी नीतियों में राजनीतिक दल बाधा उत्पन्न करता है।

(घ) राजनीति दल विभिन्न वर्गों, जातियों, धर्मों की समस्याएँ सरकार तक पहुँचाता है ।

21. किस देश में बहुदलीय व्यवस्था नहीं है ?

(क) पाकिस्तान (ख) भारत

(ग) बांग्लादेश (घ) ब्रिटेन

22. गठबंधन की सरकार बनाने की संभावना किस प्रकार की दलीय व्यवस्था में रहती है ?

(क) एकदलीय व्यवस्था (ख) द्विदलीय व्यवस्था

(ग) बहुदलीय व्यवस्था (घ) उपर्युक्त में से किसी में भी नहीं

23. किसी भी देश में राजनीतिक स्थायित्व के लिए निम्नलिखित में से क्या नहीं आवश्यक है?

(क) सभी दलों द्वारा सरकार को रचनात्मक सहयोग देना

(ख) किसी भी ढंग से सरकार को अपदस्थ करना

(ग) निर्णय प्रक्रिया में सरकार द्वारा सबकी सहमति लेना

(घ) सरकार द्वारा विरोधी दलों को नजरबंद करना

24. निम्नलिखित में से कौन-सी चुनौती राजनीतिक दलों की नहीं है ?
   (क) राजनीतिक दलों के भीतर समय पर सांगठनिक चुनाव नहीं होना
   (ख) राजनीतिक दलों में युवाओं और महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिलना
   (ग) राजनीतिक दलों द्वारा जनता की समस्याओं को सरकार के पास रखना
   (घ) विपरीत सिद्धांत रखनेवाले राजनीतिक दलों से गठबंधन करना

25. दल-बदल कानून निम्नलिखित में से किस पर लागू होता है ?
   (क) सांसदों एवं विधायकों पर (ख) राष्ट्रपति पर
   (ग) उपराष्ट्रपति पर (घ) उपर्युक्त में से सभी पर

26. राजनीतिक दलों की मान्यता और उसका चिह्न किसके द्वारा प्रदान किया जाता है ?
   (क) राष्ट्रपति सचिवालय द्वारा
   (ख) प्रधानमंत्री सचिवालय द्वारा
   (ग) निर्वाचन आयोग द्वारा
   (घ) संसद द्वारा

27. निम्नलिखित में से कौन राष्ट्रीय दल नहीं है ?
   (क) राष्ट्रीय जनता दल (ख) बहुजन समाज पार्टी
   (ग) लोक जनशक्ति पार्टी (घ) भारतीय जनता पार्टी

28. जनता दल (यूनाइटेड) पार्टी का गठन कब हुआ ?
   (क) 1992 में (ख) 1999 में
   (ग) 2000 में (घ) 2004 में

II. (i) **मिलाने करें**–

	सूची I	**सूची I**
1.	समाजपार्टी	लालटेन
2.	राजद	तीर
3.	लोजपा	बंगला
4.	जेडीयू	साइकिल

© BSTBPC WEBCOPY :NOT TO BE PUBLISHED

(ii) **मिलाने करें–**

	सूची I	**सूची I**
1.	काँग्रेस पाटी।	एनडीए
2.	भारतीय जनता पार्टी	क्षेत्रीय पार्टी
3.	कम्यूनिस्ट पार्टी	यू० पी० ए०
4.	झारखंड	क्षेत्रीय दल

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short-Answer Question)

1. बिहार में हुए 'छात्र आंदोलन' के प्रमुख कारण क्या थे ?
2. 'चिपको आंदोलन' का मुख्य उद्देश्य क्या थे ?
3. स्वतंत्र राजनीतिक संगठन कौन होता है ?
4. भारतीय किसान यूनियन की मुख्य माँगे क्या थीं ?
5. सूचना के अधिकार आंदोलन के मुख्य उद्देश्य क्या थे ?
6. राजनीतिक दल की परिभाषा दें ।
7. किस आधार पर आप कह सकते हैं कि राजनीतिक दल जनता एवं सरकार के बीच कड़ी का काम करता है ?
8. दलबदल कानून क्या है ?
9. राष्ट्रीय राजनीतिक दल किसे कहते हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions)

1. जनसंघर्ष से भी लोकतंत्र मजबूत होता है'' । क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? अपने पक्ष में उत्तर दें ।
2. किस आधार पर आप कह सकते हैं कि बिहार से शुरू हुआ 'छात्र आंदोलन' का स्वरूप राष्ट्रीय हो गया ।
3. निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़े और अपने पक्ष में उत्तर दें–

   (क) क्षेत्रीय भावना लोकतंत्र को मजबूत करती है ।

(ख) दबाव समूह स्वार्थी तत्त्वों का समूह है । इसीलिए इसे समाप्त कर देना चाहिए ।

(ग) जनसंघर्ष लोकतंत्र का विरोधी है ।

(घ) भारत में लोकतंत्र के लिए हुए आंदोलनों में महिलाओं की भूमिका नगण्य है ।

4. राजनीतिक दल को 'लोकतंत्र का प्राण' क्यों कहा जाता है ?

5. राजनीतिक दल राष्ट्रीय विकास में किसी प्रकार योगदान करते हैं ।

6. राजनीति दलों के प्रमुख कार्य बताएँ ।

7. राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय राजनीतिक दलों की मान्यता कौन प्रदान करते हैं और इसके मापदंड क्या हैं ?

*

© BSTBPC
WEB COPY ,NOT TO BE PUBLISHED